IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 23, Issue 11, Ver. 1 (November. 2018) 97-99
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

वर्तमान समय में संगीत की दशा और दिशा

डॉ0 प्रभा वार्ष्णेय
एसोसिएट प्रोफेसर, (संगीत विभाग)
श्री टीकाराम कन्या महाविद्यालय,
अलीगढ

कोई भी कला क्यों न हो उसे हम परम्परा के वातावरण ही में देख सकते हैं। यदि वह परम्परा **से** अलग कर दी जाए तो फिर वह अजायबघर की वस्तु बन कर रह जाती है। उसे फिर हम जीवित कला नहीं कह सकते। संगीत पर यह चीज विशेष रूप से लागू है। संगीत हमारे आध्यात्मिक और भावात्मक जीवन का अनिवार्य अंग हो कर रहा है। संगीत जीवन के ताने–बाने का वह धागा है जिसके बिना जीवन सत् और चित का अंश होकर भी आनन्द रहित रहता है तथा नीरस प्रतीत होता है। यह न तो सामान्य शिक्षण अथवा व्यसनपूर्ति की वस्तु है और न ही कठिन परिश्रम के परिहारार्थ साधारण–सा मनोरंजन मात्र। संगीत केवल सामान्य ध्वनि नहीं है अपितु यह सूक्ष्म अन्तवृत्तियों के उद्घाटन का सबल माध्यम है। मानव जीवन का चरम लक्ष्य 'आत्मलाभ' है' 'आत्मलाभान्न परं विद्यते।' संगीत इसी आत्मानन्द का माध्यम है। स्वरों का आकर्षण इतना प्रबल होता है कि वह कर्ण कुहरों में प्रवेश कर अन्तर चेतना को स्वभाविक रूप से अलौकिक आनन्द प्रदान करने लगता है और श्रोता घण्टों बाह्य–व्यापार भूलकर समाधिस्थ–सा बना बैठा रहता है।

आजकल तो हर व्यक्ति संगीत का श्रोता होने का दावा करता है। पुराने जमाने में आम जनता एक बड़ी भीड़ के साथ शास्त्रीय संगीत कभी नहीं सुन पाती थी। आजकल के माध्यम जैसे रेडियों, फिल्म, संगीत – सम्मेलन, टेलीविजन, ग्रामोफोन रिकार्ड और टेप उस युग में कहाँ थे। आजकल के संगीत कलाकारों की तरह उस समय के कलाकार को किसी बड़े आर्थिक संकट का सामना नहीं करना पड़ता था। आजकल का संगीतज्ञ इस प्रयोगवाद के युग में संगीत के तरह–तरह के प्रकारों और रूपों को देखता है और उनका सामना करता है और संगीत सुनाते समय उसके श्रोता उससे किसी गजल, फिल्मी तर्ज अथवा चलती फिरती चीज' की भी फरमाइश करते हैं। आम जनता एक फिल्मी गायक के सामने शास्त्रीय संगीत के एक अच्छे गायक को सुनना पसन्द नहीं करती। बाजारू, सस्ती भावुकता से भरे हुए फिल्मी गीत ही को आज की आम जनता पसन्द करती है। नई–नई तर्जे जिनमें देशी–विदेशी तर्जों का बेतुका, कर्करा और भावुक मिश्रण होता है, लोगों को पसन्द आती है।

आजकल के सगीतज्ञ का समाज में क्या विशेष स्थान है? वैज्ञानिक, तकनीकी विशेषज्ञ, डॉक्टर, राजनीति के समान उसका समाज में कोई विशेष स्थान नहीं है। उसकी गिनती समाज के पिछड़े हुए लोगों में है। संगीत का व्यवसाय कुछ लोगों के लिए शरीफ और सभ्य जरूर हो गया है। मगर पेशेवर संगीतज्ञों को लोग अभी भी तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं। वह प्राचीन समय अब कहाँ है? जब संगीत अपनी मर्यादा की उच्च शिखर पर विराजमान था और तब लोग एक कुशल संगीतज्ञ की आदर की दृष्टि से देखते थे। वर्तमान समय में संगीत का वह सम्मान नहीं हैं और न प्राचीन संगीत का अब वह मूल्य है। संगीतशास्त्र के मनीषी स्वर्गीय भारतखण्डे जी से एक बार एक कुशल और मशहूर मुसलमान संगीतज्ञ ने एक बड़ी ऊँची और पते की बात कही। उन्होंने आधुनिक युग में आजकल के संगीत प्रेम पर टिप्पणी करते हुए कहा– ''पहले कद्रदान हमारे गुलाम हुआ करते थे और अब हम ना कद्रों के गुलाम है। '' यह तीव्र समालोचना अवश्य है मगर इस व्यंग्यात्मक वाक्य में एक गहरा सत्य भी छिपा है। आजकल की संगीत रूचि से पता चलता है कि इस देश का परम्परागत प्राचीन संगीत अब किसी हद तक बहुत तरह के नाकद्रों का गुलाम बन गया है।

संगीत के संसार में तरह–तरह के इतने कर्कश और आभारतीय स्वर गूँज गए हैं कि संगीत की मधुर, अमर, वाणी अब नहीं सुनाई पड़ती। चारों ओर से आवाजें सुनाई पड़ती हैं कि प्राचीन भारतीय संगीत का प्रचार हो रहा है और हिन्दुस्तानी संगीत की उन्नति हो रही है। परन्तु उसके साथ–साथ हमें प्रतिक्रिया के कारण भी दिखाई दे रहे हैं। लोगों की संगीत रूचि का स्तर बहुत कुछ गिर सा गया है, विशेषकर जहाँ तक प्राचीन राग–रागनियों के संगीत का सम्बन्ध है। यह बात इतनी प्रत्यक्ष है कि इस पर परदा नहीं डाला जा सकता है और जहाँ तक संगीतज्ञ के सामाजिक स्तर की बात है इसे कहने पर हम बाध्य हैं कि कुछ विशेष ऊँचे कलाकारों को छोड़कर जिन्हें यश और धन दोनों प्राप्त हैं, सैकड़ों ऐसे भी हैं जिनका संगीत का पेशा है और जिनका समाज में कोई निश्चित स्थान नहीं है। ऐसे कलाकारों का दोष केवल यही है कि उन्होने बाजारू, भावुक संगीत का तिरस्कार करके प्राचीन संगीत ही को अपनाया और उसे सीखा।

जहाँ तक संगीत से प्रेम करने वालों और उसका आनन्द उठाने वालों का प्रश्न उठता है हम आधुनिक समाज को कई वर्गो में विभाजित कर सकते हैं। सबसे पहले हम देश के राज्यों और राजाओं – महाराजाओं की बात छेडते हैं। इसमें तो कोई शक नहीं की भारत की बहुत सी ऐसी बड़ी और छोटी रियासतें है जो अपने संगीत प्रेम के लिए काफी मशहूर हो चुकी है। बहुत से ऐसे राजा महाराजा भी हुये हैं जो संगीत जानते थे और जिनका संगीत अथाह प्रेम था लेकिन धन के अभाव के कारण और नए–नए शोकों और मनोरंजन में लिप्त होने के कारण आजकल के राजा–महाराजाओं को समय नहीं है कि वह प्राचीन अथवा शास्त्रीय संगीत का आनन्द उठा सकें। अब न उनके पास धन है, न समय और न रूचि। वर्तमान समय में नए धनवान अथवा पूँजीपति यदि संगीत का शौक करना चाहते है तो फिल्म

की किसी अभिनेत्री अथवा फिल्म संगीत के किसी प्लेबैक कलाकार को हजारों रूपये खर्च करके और बुलाकर संगीत का अपना शौक पूरा कर लेंते हैं। हल्के–फुल्के गानों में जो आनन्द उन्हें आता है वह रागालाप में कहाँ हैं? उनके लिए वही संगीत मन को भाता है जिसमें कण्ठ मधुर हो और जिसकी कविता में कूट–कूट कर सस्ती भावुकता भरी हो। वह शास्त्रीय संगीत सुनने के झगड़े में नहीं पड़ते और यदि वह किसी मशहूर गायक अथवा वादक को लम्बी चौड़ी फीस देकर बुलाते भी हैं तो उसकी कला का आनन्द लेने के लिए नहीं परन्तु अपनी प्रशंसा और अपनी ख्याति और इज्जत के लिए वह स्वयं नहीं सुनते जितना खास–खास अतिथि को सुनवाते हैं। रहा मध्यम श्रेणी का व्यक्ति वह पढ़ा लिखा भी होता है और संगीत में रूचि भी रखता है और दिखाता भी है। परन्तु उसकी संगीत रूचि रेडियों, फिल्म, संगीत सम्मेलन और टेलीविजन की परिधि के अन्दर सीमित होती है। उसके संगीत के बारे में अपने विचार होते हैं और पूरी स्वतंन्त्रता से वह उनका प्रचार भी करता है। यदि परम्परागत संगीत को नहीं जानता तो संगीत की आधुनिक स्वरलिपि और नई–नई संगीत की पुस्तकों से थोड़ा बहुत परिचित होता है। अगर वह खुद शास्त्रीय संगीत नहीं जानता अथवा सीखता तो अपनी सन्तान को अवश्य सिखाने का प्रयास करता है। वह संगीत प्रेमी और कनरसिया भी होता है। वह धन नहीं खर्च कर सकता मगर संगीत की प्रशंसा अथवा निन्दा अवश्य कर सकता है। रही निम्न श्रेणी के लोगों की बात जिनमें अधिकतर गरीब तथा अनपढ़ लोग होते हैं परम्परागत संगीत से उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता। वह अपने लोक संगीत की भिन्न–भिन्न अपरिभार्जित शैलियों में ही अपना आनन्द पाते हैं। वह संगीत पर वाद–विवाद नहीं करते और न तर्क करते हैं। वह केवल अपने ढंग से ही उसका आनन्द लेते हैं।

वर्तमान समय में संगीत की एक बड़ी समस्या पेशेवर संगीतज्ञ की समस्या है। इस बात पर अधिक ध्यान देने से पता चलता है कि संगीत का व्यवसाय और पेशों और धन्धों से बिल्कुल अलग है। जीविका–निर्वाह करने वाले प्राणी की हैसियत से आजकल के सामाजिक वातावरण में वह अपने को और पेशेवरों से बहुत कुछ अलग पाता है। इनमें पहले हमें संगीत के वह पेशेवर कलाकार अथवा संगीत शिक्षक दिखाई देते हैं जो थोड़ा बहुत पढ़े लिखे होते हैं और जिन्हें हम सभ्य अथवा शरीफ संगीत के शिक्षक और प्रचारक रहते हैं। या तो किसी संगीत के छोटे अथवा बड़े शिक्षा केन्द्र में संगीत शिक्षक का काम करते हैं या फिर घरों में जाकर संगीत सिखाते हैं, जिसे वह ट्यूशन के नाम से पुकारते हैं। शहर या कस्बे में बहुत से घरों में जाकर वह ज्यादातर पढ़ने वाली लड़कियों की ही ट्यूशन करते हैं जिनमें से कुछ तो संगीत किसी सरकारी परीक्षा के विषय के रूप में सीखती हैं या कुछ ऐसी भी होती हैं जिनके माता पिता सीने – पिरोने, सामान्य शिक्षा और घर के कामों के अलावा किसी कला का ज्ञान, विशेषकर संगीत का ज्ञान, दिलवाते हैं जिससे वह कुशल और प्रवीण समझी जाये और उनकों उत्तम से उत्तम वर मिले और उनका वैवाहिक जीवन भविष्य में हर प्रकार से सुखी रहे। माँ–बाँप के मन में अपनी सन्तान के सुख के लिये संगीत के प्रति ऐसा विचार और अपनी सन्तान के सुख के लिए संगीत के प्रति ऐसा विचार और ऐसी प्रेरणा रखना बिल्कुल स्वाभाविक बात है। परन्तु बहुत से बड़े शहरों में शिक्षित लड़कियाँ अथवा ऊँची शिक्षा पाने वाली लड़कियाँ संगीत कला को आधुनिक जीवन का एक शानदार ऊँचा फैशन या मनोरंजन समझकर भी सीखती हैं। इस तरह के ऊँचे किस्म के मनोरंजन अथवा तफरीह को वह सांस्कृतिक जीवन का अनिवार्य अंग समझती हैं। ऐसा मन बहलाव भी आजकल स्वभाविक माना जाता है। आधुनिक शिक्षा के स्वतंत्र सिद्धान्तों की पूर्ति करता है।

संगीत की 'ट्यूशन' करने वाला अथवा संगीत की पाठशाला में संगीत सिखाने वाला शिक्षक जो सभ्य और थोड़ा बहुत पढ़ा लिखा भी होता है। आधुनिक संगीत–शिक्षा का प्रतिनिधि माना जाता है। उसका स्थान फिर एक अनपढ़ संगीतज्ञ से कहीं ऊँचा होता है। वह अनपढ़ संगीतज्ञ परम्परागत संगीत का अनुयायी हो सकता है और घरानेदार गायक या वादक भी हो सकता है। परन्तु आधुनिक युग में संगीत के व्यवसाय में उसका स्थान एक सभ्य और शिक्षित संगीत शिक्षक से नीचा ही समझा जाता है। प्रायः ऐसे सभ्य शिक्षित संगीत–शिक्षक केवल शिक्षक ही होते हैं, कलाकार नहीं होते। परन्तु एक अनपढ़ पेशेवर संगीतज्ञ पहले स्वाभाविक रूप से कलाकार होता है। गायक या वादक और तब बाद में शिक्षक केवल इतना ही अन्तर नहीं है। ' अनपढ़ और अशिक्षित' संगीतज्ञ या पेशेवर उस्ताद अथवा गुरू या पण्डित पुरानी संगीत की शिक्षा या तालीन की पद्धति का पालन करता है और वह संगीत की किताबों और संगीत की स्वरलिपि के माध्यम से संगीत नहीं सिखाता है। उसे हम रूढ़िवादी या दकियानूसी कह सकते हैं मगर हम उसकी तालीम के सारे नियमों और सिद्धान्तों का तिरस्कार नहीं कर सकते। उनमें जो गुण हैं उनका बहिष्कार न करके हम उत्साह और कृतज्ञता की भावना से उन्हें स्वीकार कर सकते हैं, अपना सकते हैं और उनसे बहुत कुछ लाभ भी उठा सकते हैं। पुरानी तालीम के अवगुणों को भूलकर उनकी अच्छाइयों से हम बहुत फायदा उठा सकते है। इसलिए सगीत की प्राचीन शिक्षा पद्धति और वर्तमान समय की वैज्ञानिक ढंग की शिक्षा पद्धति का उचित सम्मिश्रण होना हमारे लिए लाभदायक होगा।

वर्तमान समय में संगीत का सही, परम्परागत प्रचार, उद्धार और उसकी सही उन्नति तभी हो सकती है जब भेद–भाव को दूर या कम करके हमारे संगीतज्ञों में सहयोग और एकता की भावना अधिक हो। जब तक यह नहीं होगा हमारे संगीत की विविधता से हमको ठीक लाभ नहीं पहुँचेगा। यह भी प्रासंगिक है कि हमारे संगीत का सबसे बड़ा गुण और उसकी सर्वव्यापक महानता इसी में है कि उसकी तरह–तरह की गायन और वादन शैली उसकी अथाह कला की अमर प्रतिभा का प्रमाण है। घरानेदार गायकी और वाद्य हमारे संगीत के प्रतिबिम्ब ही नहीं हैं, उसकी अमूल्य देन भी है। वह हमारी सुरक्षित अचल सम्पत्ति है जिसके खोने से हमारे संगीत को बहुत हानि पहुँचेगी और उसकी सांस्कृतिक आत्मा को बहुत धक्का पहुँचेगा। वर्तमान समय में संगीत के विज्ञों, प्रचारकों और शिक्षकों को उसकी पूरी सुरक्षा करनी चाहिए। व्यक्तित्व के सहारे मनुष्य जीवन में बहुत कुछ पा लेता है और बहुत कुछ खो भी देता है। संगीत शिक्षक का अच्छा स्वास्थ्य, सत्य आचरण आशावादिता, धैर्य, निष्पक्षता, सहनशीलता, प्रेम, नेतृत्व, क्षमता, उत्साह, तत्परता, निष्ठा एवं चातुर्य, आत्म–नियंत्रण, सहयोग, शुभ–चिन्तन, प्राकृतिक ढंग से गाने–बजाने का अभ्यास, मिलनसार, गुरू के प्रति श्रृद्धा, अन्य

संगीतज्ञों के प्रति भ्रातृभाव आदि गुण होने चाहिए। संगीत शिक्षकों को प्रशिक्षित होना चाहिए ताकि शिष्य शिक्षक की नवीनतम शैलियों एवं उनके अच्छे गुणों को अपना सकें। संगीत संस्कृति का दर्पण होता है। संगीत केवल संस्कृति का ही परिचायक है शिक्षा नहीं, जीवन के आरम्भिक क्षण से अन्तिम यात्रा तक मानव की स्वाभाविक वृत्ति के साथ–साथ संगीत ओत–प्रोत है। जैसे–जैसे मानव संस्कार में परिष्कार आया संगीत का विकास होता गया अर्थात् मनुष्य के जीवन और समाज में सभ्यता और संस्कृति की जो संभावनायें विकसित हुई हैं, उनके पीछे शिक्षा के प्रेरणा विद्यमान है। संगीत में सभ्य असभ्य का कोई भेदभाव नहीं, जो इसकी साधना करेगा, वही संगीतामृत का भागी होगा। संगीतज्ञ को ऐसी सांगीतिक रचना का सृजन करना चाहिए, जो प्रान्तों व देश की सीमाओं की भिन्नताओं में रहते हुए भी एक अव्यक्त सूत्र में मानव – हित तथा सहयोग के बिखरे हुए पल्लवों का वंदनवार शिवं और कल्याण की भावना से कला मंदिरों के चारों ओर बांध सकने योग्य हो। इस रम्य आदर्श की पूर्ति तभी सम्भव है जब शिक्षा में संगीत के शास्त्रीय ज्ञान की अभिवृद्धि की जाए, तभी संगीत शाश्वत जीवन का आकाशदीप बन सकेगा, तभी विश्व के राष्ट्रों में अपनी सांस्कृतिक कला का प्रतिनिधित्व कर सकेगा।

सन्दर्भः–

1. संगीत विशारद–लक्ष्मीनारायण गर्ग।
2. संगीत पत्रिकाऐं।
3. संगीत शास्त्र–भगवतशरण शर्मा।
4. निबन्ध संगीत–लक्ष्मीनारायण गर्ग।